Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 6.831
Volume - 7, Issue - 03 March - 2024

DOIs:10.2018/SS/202403011 --:-- Research Paper / Article / Review

8वीं से 12वीं शताब्दियों के सभी बौद्धों का कथित तान्त्रिकत्व और आचार्य शान्तरक्षित

सीमा (पी.एच्.डी. शोधच्छात्रा)
शोध-निर्देशक: **डॉ. आशीष पाण्डेय**
हिन्दी और आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, मानविकी संकाय, वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली
Email - mairam.sanskrit@mkuniversity.ac.in

सारांश: महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने बौद्धधर्म के विलोप के बारे में लिखा है कि बौद्धधर्म अपने अन्तिम पड़ाव में यानी आठवीं से बारहवीं शताब्दी के बीच में सिर्फ तान्त्रिकों का धर्म बनकर रह गया था। इन शताब्दियों में सबके सब बौद्ध भिक्षु वज्रयानी तान्त्रिक थे और उनकी प्रतिष्ठा का आधार उनकी अपनी विद्या और सदाचार नहीं थे, बल्कि उनके तान्त्रिक देवताओं और मन्त्रों की अद्भुत शक्ति थी। वे इस बात पर बहुत जोर देते हैं कि आठवीं से बारहवीं शताब्दी तक का बौद्धधर्म वस्तुतः वज्रयान या भैरवीचक्र का धर्म बन गया था। ठीक इसी तरह के विश्वास रामचन्द्र शुक्ल ने भी व्यक्त किये हैं। इसका तात्पर्य यह है कि इस कालखण्ड में कोई बौद्ध-भिक्षु विद्या और सदाचार से सम्पन्न नहीं था। लेकिन, इसके ठीक विपरीत, स्वयम् महापण्डित ही अपने ग्रन्थ बौद्ध संस्कृति में आचार्य शान्तरक्षित के द्वारा तिब्बत में बौद्धधर्म की स्थापना का विवरण प्रस्तुत करते हुए, उन्हें सदाचार और विद्या का आगर बताते हैं। साथ ही, आचार्य शान्तरक्षित के द्वारा नालन्दा से तिब्बत बुलाए गए विनयपिटक के अनुयायी यानी सदाचारी और विद्यासम्पन्न बारह भिक्षुओं का भी उल्लेख किया है। इससे सवाल उठता है कि सही बात कौन-सी है। प्रस्तुत शोधपत्र इसी समस्या के विभिन्न पक्षों पर विचार-विमर्श करता है। इसके लिए सबसे पहले बौद्धधर्म के विलोप से सम्बन्धित महापण्डित के मूल विचारों को रखा जाएगा। उसके बाद, तिब्बत में बौद्धधर्म की स्थापना के बारे में उन्हीं के विचारों को रखा जाएगा। साथ ही, आचार्य शान्तरक्षित के बारे में, प्रख्यात तिब्बतविद्याविशारद ग्लेन् एच्. मल्लिन् के विचारों को भी सत्य तक पहुँचने के लिए पेश किया जाएगा। इसके बाद, आठवीं से बारहवीं शताब्दी के बीच में, सभी बौद्धभिक्षुओं के तान्त्रिक और व्यभिचारी होने की बात पर मन्थन किया जाएगा।

कूट शब्द : आठवीं से बारहवीं शताब्दी का बौद्धधर्म, आचार्य शान्तरक्षित, बौद्ध तान्त्रिकता।

1. विषय परिचय:

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन बौद्ध साहित्य के एक महान् विवेचक के रूप में प्रख्यात विद्वान् रहे हैं। जहाँ राहुल जी ने बौद्ध धर्म की विशेषताओं का बेहतरीन ढंग से वर्णन किया है, वहीं उन्होंने बौद्धधर्म के विलुप्त हो जाने के कारणों की मीमांसा भी की है। महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने भारत के समस्त बौद्धों को वज्रयानी बताते हुए लिखा है – "भारत के सभी बौद्ध सम्प्रदाय वज्रयान-गर्भित महायान के अनुयायी हो गए थे। आठवीं से बारहवीं शताब्दी तक का बौद्धधर्म वस्तुतः वज्रयान या भैरवीचक्र का धर्म था।" (सांकृत्यायन बु.च. 1952:10) इसी तरह, वे आगे लिखते हैं – "बौद्धों में तो सबके सब वज्रयानी थे। इनके भिक्षुओं की प्रतिष्ठा उनके सदाचार और विद्या पर नहीं, बल्कि उनके तथा उनके मन्त्रों और देवताओं की अद्भुत शक्तियों पर निर्भर थी।" (सांकृत्यायन बु.च. 1952:14)

इसी तरह, हिन्दी साहित्य के जाने-माने इतिहासकार रामचन्द्र शुक्ल ने भी अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ हिन्दी साहित्य का इतिहास में महापण्डित राहुल सांकृत्यायन की इसी मान्यता को अपने शब्दों में लिखा है – "बौद्ध धर्म विकृत होकर वज्रयान सम्प्रदाय के रूप में देश के पूर्बी भागों में बहुत दिनों से चला आ रहा था। इन बौद्ध तान्त्रिकों के बीच वामाचार अपनी चरम सीमा को पहुँचा।" (शुक्ल 2014:4)

2. विषय चर्चा :

इस तरह की बात पर विश्वास कर पाना उतना भी सरल नहीं होता कि किसी भी धर्म या पन्थ के सभी अनुयायी सदाचार से हीन जीवन जी रहे हों और विद्या से सर्वथा हीन हो जाएं। इसीलिए, अब इस बात की सत्यता पर विचार किया जा रहा है कि क्या वास्तव में सभी बौद्ध भिक्षु तान्त्रिक और व्यभिचारी हो गए थे।

यह तो हो सकता है कि कुछ भिक्षु कुमार्गगामी या व्यभिचारी हो गये हों, लेकिन, सभी भिक्षुओं के बारे में यह बात लागू करना बौद्धिक अतिवाद है। आठवीं से बारहवीं शताब्दी की समयावधि में कितने ही प्रतिभाशाली बौद्ध भिक्षुओं को तिब्बत में ही बुलाया गया था। उनमें से कुछ का विवरण यहाँ पेश भी किया जाएगा। जैसे, आचार्य कमलशील, आचार्य दीपङ्कर श्रीज्ञान अतीश आदि, न केवल उस युग के अत्यन्त प्रतिभाशाली और सदाचारसम्पन्न सद्गुरु थे, बल्कि आज भी उनके साहित्य को बड़ी श्रद्धा के साथ पढा और पढाया जाता है। यहाँ आठवीं से बारहवीं शताब्दियों के लगभग चार सौ वर्षों में हुए कुछ महान् बौद्ध आचार्यों तथा विद्वानों के बारे में चर्चा की जा रही है, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि आठवीं से बारहवीं शताब्दी तक क्या सभी बौद्ध सचमुच ही वज्रयानी थे और उनकी प्रतिष्ठा के वास्तविक कारण उनका अपना सदाचार और उच्च ज्ञान न होकर सिर्फ देवता और चमत्कार ही थे। हालाँकि यहाँ उन सभी बौद्धभिक्षुओं का विवरण दे पाना तो सम्भव नहीं है, लेकिन, प्रख्यात ज्ञानवृद्ध आचार्य शान्तरक्षित को एक उदाहरण के तौर पर प्रस्तुत किया जा रहा है।

साहसी, वयोवृद्ध और ज्ञानवृद्ध आचार्य शान्तरक्षित के बारे में स्वयम् महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने लिखा है –

> "भोटराज की प्रार्थना पर नालन्दा के महान् दार्शनिक आचार्य शान्तरक्षित तिब्बत गए। राजा को उन्होंने बौद्धधर्म के भिन्न-भिन्न विषयों पर कई उपदेश दिये। यद्यपि बौद्धधर्म का तिब्बत में प्रवेश सौ वर्ष पूर्व हुआ था, किन्तु अब तक न कोई भोटदेशीय भिक्षु बना था और न वहाँ कोई मठ ही स्थापति हुआ था। राजा की इच्छानुसार आचार्य ने ब्रह्मपुत्र से प्रायः दो मील उत्तर एक मठ के निर्माण के लिए भूमि चुनी। यहीं मगधेश्वर धर्मपाल)769-802) के बनवाए उडन्तपुरी (बिहार शरीफ(महाविहार के नमूने पर सम्-ये)ब्सम् यस्(विहार की नींव डाली गई। ..... विहार-निर्माण आरम्भ करते समय ही राजा की इच्छा हुई कि भोट-देशीय पुरुष भिक्षुदीक्षा से दीक्षित किए जावें। विहार का कुछ काम हो जाने पर आचार्य ने नालन्दा से सर्वास्तिवादी भिक्षुओं को बुलवाया। भिक्षु-नियम के अनुसार भिक्षु बनाना संघ का काम है, कोई एक व्यक्ति भिक्षु नहीं बना सकता। यद्यपि मध्यमण्डल)उत्तर प्रदेश, बिहार(से बाहर पाचँ भिक्षु भी होने से कोरम् पूरा हो जाता है, तो भी आचार्य ने बारह भिक्षु बुलवाए, और मेषवर्ष में (1) ज्ञानेन्द्र, (2) द्पल् द्बङ्स्)3) (ग्चङ्(शीलेन्द्ररक्षित)4) (र्म) रिन् छेन् म्छोग्)5) (ऽखोन(क्लु-द्बङ्-पो (6) (ग्चङ्(देवेन्द्ररक्षित, (7) (प-गोर(वैरोचनरक्षित – यह सात भोट-देशीय कुलपुत्र भिक्षु बनाए गए। भिक्षु-संघ और भिक्षु-विहार स्थापति कर आचार्य शान्तरक्षित ने भोटदेश में बौद्धधर्म की नींव दृढ कर दी। सौ वर्ष की आयु में घोड़े के पैर की चोट से आचार्य शान्तरक्षित का देहान्त हो गया। विहार के पूर्व की छोटी पहाड़ी पर उनका शरीर एक स्तूप में रखा गया। साढे ग्यारह सौ साल तक मानो वह उसी पहाड़ी टेकरी पर से अपने कार्य की देख रेख कर रहे थे। इस शताब्दी के आरम्भ में वह जीर्ण स्तूप ढह पड़ा और आचार्य का अस्थिमय शरीर नीचे गिर गया। वहाँ से जमा कर आचार्य का कपाल और कुछ हड्डियाँ इस समय प्रधान मन्दिर में शीशे के अन्दर रखी गई हैं।
>
> आचार्य शान्तरक्षित एक असाधारण दार्शनिक थे, इसका पता संस्कृत में प्रकाशित उनके ग्रन्थ तत्त्वसंग्रह से लगता है। वह अपने समय के बौद्ध, ब्राह्मण, जैन सभी दर्शनों के प्रगाढ विद्वान् थे। ऐसे विद्वान् की देश में भी प्रतिष्ठा कम न थी, किन्तु यह वह समय था, जबकि भारत से साहसमय जीवन नष्ट न हुआ था। देश मैं प्राप्त सम्मान का ख्याल छोड़ 75 वर्ष की उम्र में हिमालय की दुर्गम घाटियों को पार करने को वह तैयार हो गए, जब उन्होंने देखा कि इस प्रकार वह अपने धर्म की सेवा कर सकते हैं। इस त्याग के लिए ही उनका नाम बोधिसत्त्व पड़ा।
>
> आज भी तिब्बत में अधिकांश लोग उन्हें आचार्य शान्तरक्षित की जगह म्खन्-छेन्)महापण्डित(बोधिसत्त्व के नाम से ही ज्यादा जानते हैं।" (सांकृत्यायन 2010:404-405)

यहाँ महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने यह बिल्कुल भी नहीं लिखा है कि आचार्य शान्तरक्षित व्यभिचारी और वज्रयानी तान्त्रिक तथा भैरवीचक्र में लीन रहने वाले या आधे पागल थे। इसके ठीक विपरीत, उन्होंने आचार्य शान्तरक्षित को असाधारण दार्शनिक, अत्यन्त प्रतिष्ठित और सम्मान की परवाह न करके दुर्गम घाटियों को पार करने वाला कहा है। साथ ही, यह भी बताया है कि तिब्बत के लोग तो आचार्य शान्तरक्षित को महापण्डित बोधिसत्त्व के नाम से ही ज्यादा जानते हैं। इसके अलावा, महापण्डित ने यह भी लिखा है कि न केवल आचार्य शान्तरक्षित ही इस तरह के बहादुर,

सदाचारी और विद्यासम्पन्न महापुरुष थे, बल्कि उनके अलावा भी उनके समान सदाचारी, साहसी और विद्यासम्पन्न अनेक बौद्धभिक्षु उस जमाने में भारत में विद्यमान थे, जिनमें से बारह को तो खुद आचार्य शान्तरक्षित ने ही तिब्बत में बुलाया था।

अमेरिका देश के प्रख्यात तिब्बतविद्याशास्त्री ग्लेन् एच् मल्लिन् ने आचार्य शान्तरक्षित के बारे में ने लिखा है – "This master, one of the most illustrious Buddhist scholars of his time and a former abbot of Nalanda Monastery, had been brought to Trisong Deutsen's attention by his minister Selnang, who had met Shantarakshita while travelling in Nepal. Shantarakshita came to Tibet and taught widely there. In addition, he attempted to establish Tibet's first monastery." (Mullin 2013:33)

अर्थ - यह आचार्य, अपने समय के सबसे अधिक प्रख्यात बौद्ध विद्वानों में से एक और नालन्दा महाविहार के भूतपूर्व विहाराध्यक्ष, त्रिसोंग देउत्सेन के मन्त्री सेनलंग के द्वारा उसके ध्यान में लाया गया, जो नेपाल में अपने प्रवास के दौरान आचार्य शान्तरक्षित से मिल चुका था। आचार्य शान्तरक्षित तिब्बत आए और व्यापक तौर पर देसनाएं दीं। साथ ही, उन्होंने तिब्बत का पहला बुद्धविहार बनाने का प्रयास किया।

3. विश्लेषण:

यहाँ ग्लेन् एच. मल्लिन् महोदय ने आचार्य शान्तरक्षित को भारत का सबसे ज्यादा प्रख्यात बौद्ध विद्वान् कहा है। सभी बौद्ध-भिक्षु वज्रयानी अर्थात् महापण्डित राहुल सांकृत्यायन के अनुसार व्यभिचारी तान्त्रिक थे या नहीं, इस मुद्दे पर निर्णायक मीमांसा

(1) यद्यपि अपने बुद्ध चर्या नामक ग्रन्थ में महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने आठवीं से बारहवीं शताब्दी तक के कालखण्ड में विद्यमान रहने वाले भारतीय बौद्धधर्म को तान्त्रिक धर्म ही लिखा है और सभी बौद्ध-भिक्षुओं को विद्या और सदाचार से हीन लिखा है, लेकिन, तिब्बत में बौद्धधर्म की स्थापना के लिए आचार्य शान्तरक्षित के प्रयासों की ईमानदार विवेचना करते समय, उन्होंने जो विवरण पेश किया है, वह साबित करता है कि कम से कम आचार्य शान्तरक्षित तो सदाचार और विद्या से हीन नहीं थे।

(2) ऐसा नहीं है कि आचार्य शान्तरक्षित के बारे में ऐसे विचार महापण्डित ने सिर्फ अपने भारतीय होने के कारण भारतीयों की श्रेष्ठता को प्रचारित करने के लिए भावावेश में आकर यूँ ही लिख दिया। अन्य तिब्बतविद्याविशारद भी यही सिद्धान्त प्रतिपादित करते हैं कि आचार्य शान्तरक्षित सचमुच अत्यन्त सदाचारी और विद्यासम्पन्न सत्पुरुष थे। उदाहरण के लिए, अमेरिका देश के प्रख्यात तिब्बतविद्याशास्त्री ग्लेन् एच् मल्लिन् ने भी आचार्य शान्तरक्षित के बारे में ऐसे ही विचार व्यक्त किये हैं।

(3) सिर्फ यही नहीं कि तिब्बत देश से बाहर के लोग ही आचार्य शान्तरक्षित को सदाचारी और विद्यासम्पन्न सत्पुरुष मानते हैं, बल्कि खुद तिब्बत के लोग तो उन्हें म्खन्-छेन्)महापण्डित(बोधिसत्त्व कहकर अत्यन्त आदर के साथ याद करते हैं।

(4) महापण्डित राहुल सांकृत्यायन तो यह भी बताते हैं कि तिब्बत में बौद्धधर्म की स्थापना के लिए तिब्बत के लोगों को बौद्ध भिक्खु बनाना जरूरी था। लेकिन, इस काम को कोई एक भिक्षु नहीं कर सकता था। इसलिए, नालन्दा से सर्वास्तिवादी विनयवस्तु यानी सर्वास्तिवाद नामक बौद्ध पन्थ के बारह भिक्षुओं को उन्होंने तिब्बत में बुलाया और वहाँ भिक्षुसंघ की विधिवत् स्थापना कर दी। इसका तात्पर्य यह है कि न केवल आचार्य शान्तरक्षित ही ऐसे सदाचार और विद्या से सम्पन्न बौद्धभिक्षु थे, बल्कि उस समय भारत में और भी अनेक बौद्धभिक्षु थे, जो सदाचार और विद्या के धनी थे।

(5) यहाँ यह बात भी ध्यान देने के लायक है कि जो बारह भिक्षु आचार्य शान्तरक्षित ने तिब्बत में बुलाए थे, वे सर्वास्तिवाद के अनुयायी थे। सर्वास्तिवाद तो एक थेरवादी निकाय यानी पन्थ है। इसका तात्पर्य यह है कि उस जमाने में सबके सब बौद्ध-भिक्षु सिर्फ महायानी या वज्रयानी ही नहीं थे, बल्कि थेरवादी भिक्षु भी विद्यमान थे। इतना ही नहीं, खुद महायानी बौद्धभिक्षु भी विनय के मामले में सिर्फ थेरवादियों को ही आदर्श और आदरणीय मानते थे। इसी करण, आचार्य शान्तरक्षित ने महायानी या वज्रयानी भिक्षुओं को तिब्बत में नहीं बुलाया।

(6) ये सब बौद्धभिक्षु तो सिर्फ आचार्य शान्तरक्षित जी के जमाने के ही थे। ऐसा नहीं है कि उनके बाद, भारतीय बौद्धधर्म में अन्य शीलवान् और विद्यावान् बौद्धभिक्षु नहीं हुए। उनके बाद भी, आचार्य दीपंकर श्रीज्ञान अतीश, आचार्य रत्नकीर्त्ति, आचार्य मोक्षाकरगुप्त, महावैयाकरण आचार्य धर्मकीर्त्ति आदि अनेक गम्भीर विद्वान् और शीलवान् बौद्धभिक्षु हुए हैं, जिनके साहित्य ने देश की ज्ञानसम्पदा को अपना अमूल्य योगदान देकर इसकी श्रीवृद्धि की है।

4. निष्कर्ष:

इस सम्पूर्ण चर्चा से निष्कर्ष निकलता है कि महापण्डित राहुल सांकृत्यायन बुद्धचर्या में जो विचार व्यक्त किये हैं, वे तथ्यात्मक नहीं माने जा सकते। अगर सभी बौद्ध भिक्षु वज्रयानी हो गए होते, तो नालन्दा के महाविहार में से बारह सर्वास्तिवादी भिक्षु तिब्बत नहीं जा सकते थे। फिर बारह तो तिब्बत गये, उनके अलावा भी कितने ही और भी सर्वास्तिवादी भिक्खु नालन्दा में रहे ही होंगे। ध्यान रहे कि सर्वास्तिवाद तो थेरवाद यानी हीनयान बुद्धधम्म की ही उत्तरी शाखा थी। स्वयम् महापण्डित राहुल सांकृत्यायन के लेख से ही साबित हो जाता है कि **नालन्दा आदि बौद्ध-विहारों में न केवल वज्रयानी और महायानी भिक्खु ही रहा करते थे, बल्कि थेरवादी यानी हीनयानी भिक्खु भी रहा करते थे और इन सभी बौद्ध निकायों यानी पन्थों के आचार्य धम्म के कार्य में एक-दूसरे के निकायों यानी पन्थों की मदद भी किया करते थे।**

अतः आचार्य शान्तरक्षित का अस्तित्व और उनके द्वारा तिब्बत में बौद्धधर्म को प्रतिष्ठित किया जाना राहुल जी की इस बात को गलत साबित कर देते हैं कि आठवीं से बारहवीं शताब्दी तक के कालखण्ड में विद्यमान रहने वाला भारतीय बौद्धधर्म सिर्फ एक तान्त्रिक धर्म ही था और सबके सब बौद्धभिक्षु वज्रयानी थे और उनकी प्रतिष्ठा उनके सदाचार और विद्या पर नहीं, बल्कि उनकी तथा उनके मन्त्रों और देवताओं की अद्भुत शक्तियों पर निर्भर थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. शुक्ल, रामचन्द्र. *हिन्दी साहित्य का इतिहास*. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन, 2014.
2. सांकृत्यायन, महापण्डित राहुल (सम्पा. अनुवा.). *दोहाकोश [हिन्दी-छायानुवाद-सहित]*. पटना: बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, 1957.
3. ---, *बौद्ध संस्कृति*. औरंगाबाद: कौशल्य प्रकाशन, 2010.
4. ---, *बुद्ध-चर्य्या (भगवान् बुद्ध की जीवनी और उपदेश)*. सारनाथ: महाबोधि सभा, 1952.
5. Mullin, Glenn H. *The Fourteen Dalai Lamas: A Sacred Legacy of Reincarnation*. Mumbai: Jaico Publishing Housing, 2013.